॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे परमदेव! तू कल्याण करने वाला है। तू हमारा ही नहीं सँसार का कल्याण करने वाला है। आज सँसार में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या के हृदय में उस उज्ज्वलता को दें जो आपने सृष्टि के प्रारम्भ में प्रत्येक वेद मन्त्र द्वारा हमें प्रेरणा दी है। उस प्रेरणा को पुनः से जागृत कर। विधाता! आपने सृष्टि का निर्माण किया और सर्वप्रथम मानव के लिए ज्ञान का स्रोत दिया, उस आनन्द के स्रोत को आज भी दे। किसको दे? महान् पात्रों को दे। आज हमारे हृदय को पवित्र बना, जिससे हम सँसार में उज्ज्वल बनें विधाता! जब आपकी कृपा होगी तो हम आपकी दया के पात्र बनेंगे। हे भगवन्! तू दया कर और इतनी दया कर कि हमारी आत्मा के द्वारा कोई दोष न आए। विधाता! जब हमारी आत्मा के द्वारा नाना प्रकार के दोष आ जाएँगे, तो हमारा जीवन, जीवन न रहेगा। प्रभु! दया कर।

हे प्रभु! हम कैसे अभागे हैं, सँसार में। मैं तो भगवन्! वह कर्म करना चाहता हूँ जिस कर्म को करके प्रभु! मैं तुम्हारी गोद में आ जाऊँ। भगवन्! मैंने आज से पूर्व काल में जो पाप किया है उसे क्षमा करो। आज मैं क्षमा चाहता हूँ। प्रभु! तू आज मुझे अपना और अपनाकर अपनी गोद में ले।

हे भगवन्! तू यज्ञ को देने वाला है, प्रेरणा देने वाला है, भगवन्! वह प्रेरणा दो, जिससे हम अपना और इस सँसार का कल्याण कर सकें। जब विधाता की दया होती है तो हमारी आन्तरिक भावना उज्ज्वल और पवित्र हो जाती है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 549 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 624
वर्ष : 46 44 समग्र वर्ष : 52

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. शिक्षा पद्धति (द्वितीय-भाग)	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-18
4. माताओं का दिव्य दर्शन	पूज्यपाद-गुरुदेव	19-38
5. ऋषियों के उद्‌गार		39
6. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		40-42

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गुणगान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' के रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)
पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली
बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900
website : www.shringirishi.in
Email : contact@shringirishi.in

।। ओ३म् ।।

शिक्षा पद्धति
(द्वितीय-भाग)

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनुपम है। जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चेतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। आज हम जब उस परमपिता परमात्मा की महिमा को मानवीय दर्शन में दृष्टिपात करते हैं तो प्रायः हमारा हृदय यह पुकारने लगता है कि यह परमपिता परमात्मा की एक अनुपमता है। मानव उसकी एक आभा है। प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही नाना प्रकार की उड़ानें उड़ता रहा है। जिस भी काल में ऋषि-मुनि विद्यमान हो करके और अपने में विचार-विनिमय उन्होंने करना प्रारम्भ किया तो उन का विचार एक अनूठा बन करके रहा है। उन विचारों को राष्ट्रीयवाद में और वैज्ञानिकों ने उन्हीं विचारों को ले करके अपने जीवन की प्रतिभा अथवा अपने मानवीय जीवन का एक कर्म बनाया जो मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए तुम्हें कहा था।

ऋषि मुनियों का चिन्तन

आज भी मुझे वह वाक्य स्मरण आते रहते हैं, जिससे पूर्व काल

में हम यह उच्चारण कर रहे थे कि हमारे ऋषि-मुनियों ने विद्यमान हो करके एक मानवीय चिन्तन किया और उन चिन्तनवेत्ताओं ने कहीं वेदों में, वेद के मन्त्रों में कुछ ज्ञान और विज्ञान मानव के विचारों में उद्बुद्ध हो करके आता रहता है। इसी प्रकार यही विचार ऋषि-मुनियों के मस्तिष्कों में एक आत्मीय आभा में नियुक्त होता रहा है। बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि हमारा जो जीवन है, हमारे मानव जीवन की जो रचना है उसमें सबसे ऊर्ध्वा में जो स्रोत है वह प्यारा प्रभु कहा जाता है। परन्तु यदि हम यह विचारते हैं कि राष्ट्रीयवाद ही इसका दायित्व माना गया है यह विचार मेरे में समाहित नहीं हो रहा है। क्योंकि राष्ट्रवाद की रचना तो उस काल में होती है जबकि मानव समाज में उद्दण्डता का प्रति उद्यत हो जाता है अथवा उद्दण्डता उत्पन्न हो जाती है उस समय राष्ट्रवाद की उत्पत्ति हुआ करती है। भगवान् मनु ने जब राष्ट्र का निर्माण किया तो नाना ऋषिवरों का एक समूह और गोष्ठियाँ होती रहती थीं। इन गोष्ठियों में यह प्रश्न किया गया कि हम अपने राष्ट्र की भूमिका, राष्ट्र का एक क्रियाकलाप बनाना चाहते हैं वह हमारा कैसा होना चाहिए?

भगवान् मनु और महर्षि सोमवृतिका सम्वाद

मुनिवरो! मुझे कुछ ऐसा स्मरण है कि ऋषि-मुनि जब विधान को निर्माणित करने लगे, धार्यामी बनाने लगे और यह विचार आने लगा कि राष्ट्रवाद का निर्माण करना है और राष्ट्र किसे कहते हैं? भगवान् मनु से यह प्रश्न किया गया, महर्षि सोमवृतिका मुनि ने प्रश्न किया राष्ट्रवाद कहते किसे हैं? वह वेद के मन्त्रों को उद्बुद्ध करने लगे और वेद में राष्ट्रवाद की चर्चा आयी। तो भगवान् मनु से प्रश्न किया गया कि राष्ट्रवाद की ही तुम्हारे हृदय में प्रेरणा क्यों उत्पन्न हुई? तो भगवान् मनु ने यह कहा कि प्रजा को मैं एक सुचारू रूप से जीवन देना चाहता हूँ। मेरे हृदय में एक विचार आ रहा है मैंने वेदों का अध्ययन किया

है। दर्शन शास्त्रों को अपने में मैंने विचार-विनिमय किया है। परन्तु मेरे हृदय में यह वाक्य आता रहता है कि मैं एक समाज के विचारों को, ऊँचे क्रियाकलापों को विभक्त करना चाहता हूँ। उस समय सोमवृतिका ने कहा कि हे भगवन्! आप ऐसा क्यों चाहते हैं? मेरे विचारों में यह नहीं आ रहा है कि आपके विचारों में यह भाव क्यों उत्पन्न हो रहा है कि मैं समाज को विभक्त करना चाहता हूँ। सोमवृतिका ने यह कहा हे मनु! आज इस भूमिका को तुम रचाने जा रहे हो यह अन्तिम चरण में इस प्रकार की भूमिका बन जाएगी कि मानव-मानव के रक्त का पिपासी बन जाएगा। यह वाक्य महात्मा सोमवृतिका ने मनु से कहा। तो उन्होंने अपनी लेखनियाँ बद्ध की। उन्होंने कहा प्रभु! मेरा विचार यह है कि यह जो बुद्धिमान समाज है इसको ब्राह्मणत्व में परणित किया जाए और सबसे प्रथम माता को स्थान दिया जाए। उन्होंने कहा कोई स्थली अब तक ऐसी प्राप्त नहीं हुई है जहाँ माता का अस्तित्व न हो। क्योंकि जिन स्थलियों में निर्माण हुआ करता है इनका तो अस्तित्व सदैव ऊँचा बना ही रहता है। परन्तु रहा यह वाक्य कि उसमें ज्ञान और विज्ञान की सूक्ष्मता होती रहती है। मुनिवरो! जब भगवान् मनु से यह वाक्य कहा गया तो भगवान् मनु ने वेद की आख्यायिका को प्रकट करते हुए कहा कि भगवन्! माता ही जननी कहलाती है। मैंने वेदों से कुछ सूक्तों की रचना की है और उनको निकासा है। **मेरा हृदय यह कहता है कि माता जैसे परम्परागतों से अध्ययनशील रही हैं, उनका अध्ययन बड़ा विचित्र होना चाहिए। महर्षि विराटकेतु मुनि महाराज ने भी गृह सूक्तों का निर्माण किया था।** करोड़ों वर्षों पूर्व उनकी रचनाएँ हुई और यह कहा गया कि विद्यालयों में ब्रह्मचारी का अध्ययन होना चाहिए। कन्याएँ अपनी स्थलियों पर जब अध्ययन करना प्रारम्भ करती हैं गृह सूक्तों का तो गृह सूक्तों में ब्रह्माण्ड और पिण्ड की रचना का ज्ञान कराया जाता है। पिण्ड क्या है और ब्रह्माण्ड क्या है। सबसे प्रथम माताओं को मेरी पुत्रियो को यह निर्णय कराया जाए।

सबसे प्रथम

मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे कई काल में राष्ट्रवाद की चर्चाएँ की हैं परन्तु मैं उस राष्ट्रवाद की चर्चाओं में न जाता हुआ यह कहता रहता हूँ कि सबसे प्रथम यह राष्ट्रवाद नहीं होना चाहिए। सबसे प्रथम मेरी पुत्रियो को विद्यालय में गृह सूक्तों का अध्ययन कराया जाना चाहिए। उन्हें पिण्ड और ब्रह्माण्ड की रचना का ज्ञान कराया जाए। आचार्यों का यह कर्त्तव्य है जो वेद के मर्म को जानने वाले होते हैं उन्हें यह ज्ञान होता है, मेरी पुत्रियो को इस प्रकार का ज्ञान और विज्ञान और ब्रह्मचारियों को भी विद्यालय में इस प्रकार का ज्ञान होना चाहिए। उसमें आयुर्वेद भी है और उसमें ज्ञान विज्ञान भी है। उसमें वेदों के अभ्युदय होने वाला जीवन है। मुझे स्मरण है मैंने इसी मनु के विचारों को महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में इनका बड़ा अध्ययन किया और जब आचार्य के चरणों में विद्यमान हो करके ब्रह्मचारिणी अपना अध्ययन कर रही है और अध्ययन करती हुई उन्हें आचार्य पिण्ड और ब्रह्माण्ड की चर्चा कर रहा है कि पिण्ड क्या है और ब्रह्माण्ड क्या है? इसी वाक्य को लेकर के हमारे यहाँ पूर्व काल में जो उपनिषदों का पठन-पाठन करने वाले हैं, उनमें यह वार्ता आती रहती है। हमारे यहाँ एक-एक वेद मन्त्र को ले करके इसकी विवेचना होती रही और यह वर्णन कराया।

कृष्ण पक्ष शुक्ल पक्ष

हमारे यहाँ कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष की रचना हुई। रचना क्या है? कि इसी शुक्ल पक्ष में और कृष्ण पक्ष में मानव का, समाज का जीवन व्यतीत होता रहा है। मैंने बहुत पुरातन काल में वर्णन कराया कि कृष्ण पक्ष कहते हैं अन्धकार को और शुक्ल पक्ष कहते हैं प्रकाश को। बाहरीय जगत् में चन्द्रमा और सूर्य से इसका समन्वय होता है। परन्तु जब हम आध्यात्मिकवाद में या मानवीय दर्शन में जाते हैं तो

मानव दर्शन में कृष्ण पक्ष नाम अन्धकार को माना है, अज्ञान को माना है। अज्ञानी मानव ही कृष्ण पक्ष में परणित होता है। कृष्ण पक्ष किसे कहते हैं? एक समय मुझे स्मरण आता रहता है, हमारे यहाँ एक **रेणकेतु कान्ता** नामक विदुषी थी महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में। इस प्रकार की विवेचना करती रहती थी। तो कान्ता से कहा गया हे कान्ता! हम यह जानना चाहते हैं कि मानव के जीवन का कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष से क्या समन्वय है? तो मुनिवरो! कान्ता ने विद्यालय में ब्रह्मचारिणियों के मध्य में विद्यमान हो करके कहा कि कृष्ण पक्ष कहते हैं मानव में प्रमाद होता है, जहाँ मानव में आलस्य होता है, जहाँ मानव में तमोगुण छाया रहता है उस काल को या उस अवस्था का नाम हमारे यहाँ कृष्ण पक्ष कहा जाता है। वही कृष्ण पक्ष है जिसमें मानव सदैव रत्त रहता है यही वाक्य लेकर के जब उनसे कहा कि शुक्ल पक्ष क्या है? उन्होंने कहा कि शुक्ल पक्ष में आलस्य रहित जो प्राणी होता है, ज्ञान की उड़ान उड़ने वाला होता है, प्रत्येक ज्ञान में ज्ञान का दर्शन करता है, मानवीय दर्शन करता है, प्रत्येक वस्तु के ज्ञान का दर्शन करता है, मानवीय दर्शन करता है तो वह उसके लिए शुक्ल पक्ष कहलाता है। जब कान्ता ने इस प्रकार का उपदेश दिया तो उन्होंने एक वाक्य और कहा कि प्रत्येक पक्ष में पन्द्रह (15) दिवस के जो पक्ष हैं उन पक्षों में अपना-अपना महत्त्व माना गया हैं। उन्होंने वर्णन करते हुए कहा, हमने भी यह अध्ययन किया जब मेरी पुत्रियाँ रजो अप्रतः में परणित होती हैं तो तीन रात्रियाँ हमारे यहाँ कृष्ण पक्षों की कही जाती हैं। इस विद्या का अध्ययन कराने वाले जब आचार्यजन होते हैं तो ब्रह्मचारिणियों की भी यह गृह आश्रम में आने से स्वर्ग की स्थापना हो जाती है। जब कन्याओं को यह उपदेश दिया जाता है कि तुन्हें सन्तान को आगे जन्म देना है। जन्म देने वाला तो महा प्रभु कहा जाता है और माता जब अपने में गृह सूक्तों का पठन-पाठन करती है तो उनके विचार बड़े भव्य और पवित्र बने रहते हैं। यही पवित्र विचारों से सन्तानों को जन्म देती

रहती हैं। ऐसा मुझे स्मरण है वह माता का शुक्ल पक्ष कहलाता है जब माता अपने गर्भ से, आत्मा से चर्चा वार्ता प्रकट करती है। कान्ता ने यह उपदेश दिया। जब मौन हो करके शान्त रह करके गर्भ में होने वाला बाल्य होता है उससे अन्तर्मुखी हो करके वह अपने में चर्चा करती है और वह कहती है हे आत्मा! तू जो इस शरीर में आया है, तेरी जो प्रवृत्तियां हैं वह बिखरने वाली हैं कुछ प्रवृत्ति मानव की वाणी में बिखरती रहती हैं। इसी प्रकार पिता की प्रवृत्ति माता की प्रवृत्ति से भिन्न हो जाती है। इसी प्रकार वह कहती है, हे आत्मा! तेरे इस भिन्न प्रवृत्ति वाले शरीर में आने का उद्देश्य क्या हैं? वह आत्मा जो माता के गर्भस्थल में विद्यमान है वह आत्मा माता की आत्मा से, माता के विचारों से उद्गम् वार्ता प्रकट करती रहती है।

मैं बड़े आश्चर्य की वार्ता तुम्हें प्रकट करा रहा हूँ। माता अध्ययन करती है और अध्ययन करती हुई मानव दर्शनों को कहती है हे आत्मा! तू मुझे कोई उत्तर नहीं दे रही है। मैं तुझे उत्तर देना चाहती हूँ। तूने मेरे गर्भ से जन्म लेना है। मेरे गर्भाशय को तुझे दूषित नहीं करना होगा। जब तू बाहरीय जगत् में आएगा तो तेरा ज्ञान-विज्ञान इतना विशाल होना चाहिए जिससे मेरा नामोकरण ऊर्ध्वा में परणित होता रहे। गृह सूक्तों की एक विचित्र ज्ञान की धारा है। कान्ता अश्वपति के राष्ट्र में अपना उपदेश देती रहती थी अपने विचार देती रहती थी और उन्हीं विचारों को लेकर के उनका राष्ट्र, उनका समाज पवित्र बनने लगा। यह कर्म उन्होंने किया। इसके पश्चात् लोरियों का पान कराना है। लोरियों का पान कराती माता का शुद्ध हृदय होना चाहिए। आहार पवित्र होना चाहिए। वेद के ऋषियों ने तो यह कहा कि एक समय त्रेता के काल में महाराजा पिप्पलाद से मुनि की पत्नी ने वैद्यराज सुधन्वा से एक समय यह कहा कि महाराज! मैं कौन-सा आहार प्राप्त कर सकती हूँ। उन्होंने औषधियों का निर्णय दिया और कहा कि अमुक समय में इन औषधियों

का पान किया जाए तो यह विज्ञान तुम्हारे हृदय में परणित हो जाएगा। यह आचार्यों का कथन है। आज मैं आचार्यकुल में नहीं जाना चाहता हूँ। केवल विचार देना चाहता हूँ कि माता शुद्ध और पवित्र हृदय से पांच वर्ष तक बालक को ब्रह्मचारी बनाने की शिक्षा दे देती है। राष्ट्रवाद की शिक्षा दे देती है। इसी प्रकार वह पितरों के युग में प्रवेश करता है।

पवित्र आचार्य

जब पितर अपने जीवन की प्रतिभा का वर्णन कराता है तो वह आचार्यकुल में प्रवेश कर दिया जाता है। आचार्य कैसा हो? वेद का ऋषि कहता है कि आचार्य ऐसा हो, ब्रह्मचारी हो ब्रह्मवेत्ता हो। वह ब्रह्म की प्रतिभा को जानने वाला हो और जो परमात्मा से वार्ता प्रकट करता हो। यह बड़ा विचित्र वाक्य है कि आचार्य परमात्मा से कैसे वार्ता प्रकट करता है? आचार्य वह पवित्र होता है जो परमात्मा से वार्ता प्रकट करता है और कहता है कि हे प्रभु! मैं आपकी शरण में आया हूँ। आपने मुझे यह कर्त्तव्य दिया है बाल्य मेरे आश्रम में विद्या का अध्ययन कर रहे हैं और अध्यापन का कार्य मेरा क्रियाकलाप बन गया है। आचार्य जब इस प्रकार प्रभु से अपनी वार्ता प्रकट करता है। वेद मन्त्र के कथन में अपनी विवेचना करने लगते हैं तो वह आचार्य तीन प्रकार की विद्या को प्रदान करता है। सबसे प्रथम जो विद्या है उसका नाम है ब्रह्मज्ञान। ब्रह्म कैसा है? और तुम्हारी इन्द्रियों में कैसे समाहित रहता है। द्वितीय वह ज्ञान कराता है कि तुम्हारा व्यवहार पवित्र होना चाहिए। व्यवहार को श्रद्धा में लाता है और तीसरा उसमें वेद का विज्ञान होना चाहिए। वेद का जो विज्ञान है वह एक महान् है, वह मानव को एक मानवता का दर्शन कराता है। जो व्यवहार को जानता है, यौगिकवाद को जानता है और यौगिकजन को जानता है वही वेद का मार्ग जान सकता है। चौमुखी जो विद्या है इसका जो अध्ययन करने वाला हो, वही वेद की प्रतिभा को ऊँचा बनाता रहता है।

यौगिकवाद का स्वरूप

मैंने वेद के सम्बन्ध में बहुत-सी चर्चाएँ की हैं। मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे कई काल में यह वर्णन कराया कि महाभारत काल का जो समय व्यतीत हो गया उसके पश्चात् का जो काल है वह रूढ़िवाद में परणित हो गया। हिंसक प्राणियों ने वेद की प्रतिभा को नष्ट कर दिया। मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे एक समय यह प्रकट कराया था मैं आज उनके प्रश्नों का उत्तर यह देना चाहता हूँ कि उनका जो वाक्य था वह बड़ा कठोर रहा है मैं इसका उत्तर इन रूपों में दे सकता हूँ कि जब योगीजन नहीं रहे यौगिक व्यवहार और विज्ञान जब नहीं रहता है, वह विज्ञान को वेद में से दूरी कर देते हैं, केवल अपने उदर की पूर्ति का एक साधन बना लेते हैं तो वह वेद की प्रतिभा को अपने से दूरी कर देते हैं। **वेद हमारा पूज्यस्थली है और व्यवहार जिसका पवित्र होता है वह पूज्य होता है और जिसके द्वारा विज्ञान होता है वह पूज्य होता है और जिसके द्वारा यौगिकवाद होता है वह प्राण और मन को एकाग्र करके अपनी हृदयस्थली में वेद के मन्त्र को चिन्तन में लाता है, श्वास की तरङ्गों में गति करने लगता है।** वेद का योगी सफलता को प्राप्त होता है। मैंने बहुत पुरातन काल में जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अध्ययन करता रहा हूँ, वह काल मुझे स्मरण है और लाखों-करोड़ों वर्ष व्यतीत हो गए मुनिवरो! जब ऋषि मुनि यौगिकवाद में प्रवेश करते थे! यौगिकवाद किसे कहते हैं? जहाँ मानव का दर्शन होता है, जहाँ आत्मा का विज्ञान मानव के समीप उभर करके आता है वही तो यौगिकवाद कहलाता है। विज्ञान की सीमा समाप्त हो जाती है।

विचारणीय क्या कि यौगिकवाद जिसके समीप होता है एक वाक्य आया है कि जब सदने वर्णा की विवेचना हमारे समीप आती है तो विचार आता है कि सदन तो गृह को कहते हैं। गृह के सम्बन्ध

में भिन्न-भिन्न प्रकार की विचारधाराएँ हैं। व्यवहार में बाहरीय जगत् में सदन कहते हैं जो गृह है। उस गृह का नाम सदन है। इस वाक्य को ले करके जब उसमें विज्ञान आता है उस विज्ञान में एक परमाणुवादी सदन आता है। क्योंकि जिस गृह में हम वास कर रहे हैं उस गृह में परमाणुवाद गति कर रहा है। उस गृह में अणुवाद गति कर रहा है। वह श्वास के साथ में शरीरों में प्रवाह गति कर रहा है। उन्हीं परमाणुओं को ले करके वैज्ञानिक अपने गृह में चित्रों का दर्शन कर रहा है। तो वह विज्ञान बन गया और विज्ञान की आभा बन करके रहती है, उसी में यौगिकवाद बनेगा। इसमें आत्मा से जो तरङ्गें उत्पन्न हो रही हैं प्रत्येक मानव के जो गृह हैं ब्रह्मा सदनम् वह व्यवहार में गृह बन गया बाहरीय जगत् में। विज्ञान में वह परमाणुओं की स्थली बन गयी। आध्यात्मिकवाद में यह बाहरीय जो गृह हैं यह न होने के तुल्य बन करके आत्मा का जो गृह है यह हमारा मानव शरीर माना गया है। यह आत्मा का गृह बन गया और इस गृह में आत्मा कैसे वास कर रहा है? हृदय में नाना प्रकार की तरङ्गों की तन्तुओं की धारा प्रारम्भ हुआ करती हैं। नाना प्रकार के जो तन्तु हैं वह हृदय से उत्पन्न होते हैं। आत्मा सूर्य का प्रतीक कहलाता है। वह परमाणुओं के चित्रों का विभाजन करता रहता है। हमारा जो मानव शरीर है यह प्रकृति के पञ्च महाभूतों का समूह माना गया है और इस पञ्च महाभूत समूह में वह आत्मा विद्यमान है वह सदन बनाए हुए है। वह पञ्चमहाभूत ही तो आत्मा का सदन कहलाता है। वही तो आत्मा का गृह माना गया है। उन्हीं के आधार पर जब प्रभु ने मानव शरीर की रचना की तो पाँच ज्ञानेन्द्रियों की रचना की है और इनके साथ में पाँच प्राणों की रचना की है और वह जो पाँचों प्राणों से इन्द्रियों का समन्वय है वह सदन के पञ्च द्वार हैं। और पाँचों द्वारों से ही सदन का प्रादुर्भाव होता है। यौगिकवाद कहते हैं कि उन तरङ्गों को विशुद्ध रूप देना। उन तरङ्गों को दूषितपन ना देना, उनको नियन्त्रण में लाने का नाम यौगिकवाद कहलाता है। वही यौगिकवाद

वेद की आभा को परणित करता है। वह मानव की विवेचना मुझे कोई प्रिय नहीं लग रही है कि आज मैं यह उच्चारण करने लगूँ वेद भिन्न-भिन्न रूपों में भिन्न-भिन्न आश्रमों का एक-एक वेद है। वेद तो ज्ञान कह रहा है। वेद व्यवहार कह रहा है। वेद यौगिकवाद की व्याख्या कर रहा हैं। यह वेद की प्रतिभा कहलाती है जितना भी ज्ञान और विज्ञान है वह वेद के माध्यम से प्रारम्भ होता है।

मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी ने पुरातन काल में यह वर्णन कराया था कि मध्य काल इस प्रकार का हुआ उसमें वेद केवल पूजा की स्थली माने गए, ब्राह्मण समाज ने, बुद्धिमानों ने पूजा की स्थलियों को उच्चारण किया कि ऐसा नहीं मैं इसका खण्डन नहीं कर रहा हूँ। मैं इसका मण्डन करता हूँ कि वेद प्रकाश है और प्रकाश पूजा का स्रोत है परन्तु उस प्रकाश में तीन प्रकार की तरङ्गों का प्रादुर्भाव होता है और वह तीन प्रकार की तरङ्गें क्या हैं, व्यवहार है, विज्ञान है और यौगिकवाद कहलाता है। यह तीन प्रकार की तरङ्गें वेद रूपी प्रकाश से उत्पन्न होती हैं। जब मेरी प्यारी माता वेद का अध्ययन करती है और गृह सूक्तों का पठन-पाठन करती हैं तो वह सन्तान को ऊँचा बनाती हैं। व्यवहार में ऊँचा बना देती हैं। ब्रह्मवेत्ता बना देती हैं। जब मैं माता की लोरियों का पान करता था वह काल भी मुझे स्मरण है माता का नामोकरण उच्चारण करते ही माता मुझे भयङ्कर वनों में यह कहा करती थी हे बाल्य! यह प्रकृति है। इस प्रकृति में दर्शनों का तुम्हें अध्ययन करना है। दर्शनों का अध्ययन करते हुए इसमें विचित्रता को लाना है। मुनिवरो! विचार यह कि वेद का यदि प्रकाश लाना है और रूढ़िवादों को समाप्त करना है तो माताओं को गम्भीर अध्ययन करना होगा और वह अध्ययन वानप्रस्थीजन जैसा मैंने पूर्वकाल में वर्णन किया है, जब गृह आश्रम से माता-पिता उपराम हो जाते हैं और ज्ञान को ले करके विद्यालयों में पठन-पाठन कराते हैं। महाराजा अश्वपति के यहाँ इस प्रकार के वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण हुआ, पुरातन काल में राष्ट्रीय

विज्ञानवेत्ताओं ने और भौतिक विज्ञानवेत्ताओं ने अपना-अपना वर्णन किया है। जब इस प्रकार आभा में नियुक्त होने वाला प्राणी मात्र दर्शन करता है तो यह मानवीय दर्शन अपने में महान् और प्रकाशमयी बन करके रहता है। आज मैं इन विचारों को इसलिए दे रहा हूँ कि महाराजा अश्वपति के यहाँ विज्ञान अपने में अनूठा माना गया है। विज्ञान की अपनी-अपनी धाराएँ हैं।

महर्षि रेवक मुनि का कन्या विद्यालय में भ्रमण

एक समय महाराजा अश्वपति के यहाँ गाड़ीवान रेवक मुनि आए और कहा कि प्रभु! मैं आपके यहाँ विद्यालयों में भ्रमण करना चाहता हूँ। तो वह विद्यालयों में जब भ्रमण करने के लिए पहुँचे तो वहाँ उनकी धाराएँ बड़े विशुद्ध रूपों से वर्णन हो रही थीं। गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज एक सौ पाँच (105) वर्ष तक गाड़ी के नीचे तपस्या करते रहे। गायत्री का जपन करते रहे। अनुष्ठान करते रहे। प्राणायाम करते रहे। उस समय जब वह महाराज अश्वपति के राष्ट्र में आए तो कन्या विद्यालय में प्रवेश किया जहाँ कन्याएँ अध्ययन कर रही थीं। वानप्रस्थ दीक्षा लेने वाली देवियाँ उन्हें अध्ययन करा रही थीं। तो अपने में जब एक अध्यापन का कार्य क्रियाकलाप कर रही थीं, उनके समीप आए तो गाड़ीवान रेवक मुनि ने कुछ चर्चाएँ कीं। चर्चा करते हुए गाड़ीवान रेवक मुनि के हृदय में जो आचार्य थी उनकी तरङ्गें गाड़ीवान रेवक मुनि के हृदय में प्रवेश कर गयीं। जब हृदय में प्रवेश हो गयीं तो प्रवेश होते हुए वह तपस्वी थे, एक क्षण समय वेद की आभा को ले करके मौन हो गए। तो वह तरङ्गें कौन-सी थीं? उनके हृदय में यह विचार आया कि यदि ऐसे ऋषि गृह आश्रम में प्रवेश हो जाते तो मैं एक तपस्वी बालक को जन्म दे देती। यह तरङ्गें उसके हृदय में समाहित हो गयीं। मुनिवरो! महाराजा अवश्वपति ने जब विद्यालय का अध्ययन कराया तो गाड़ीवान रेवक मुनि से कहा, भगवन्! आपको यह मेरा विद्यालय कैसा

प्रतीत हुआ? उन्होंने कहा तुम्हारा विद्यालय बहुत ही पवित्र है परन्तु यह जो अध्यापक का कार्य करा रही है, आचार्य जो देवी है उसका नाम शकुन्तकानि था यह शकुन्तकानि इस योग्य नहीं है कि यह ब्रह्मचारियों को सफलता को प्राप्त करा सके। आश्चर्य में बोले, महाराज! मैं तो मनु सिद्धान्त का अध्ययन करता रहता हूँ। उन्होंने कहा इसके हृदय में यह विचार आया। जब यह वार्ता प्रकट कर रही थी, मैंने अपने हृदय में तपस्या के बल से यह दृष्टिपात किया। उसका आकार बन करके मेरे हृदय में समाहित हो गए। इनके विचारों में जो इस प्रकार की तरङ्गों का प्रादुर्भाव होता है तो जिन कन्याओं को यह विद्या अध्ययन कराएगी, यह परमाणु उनके हृदयों में समाहित हो जाएँगे। जब यह वाक्य महाराजा अश्वपति ने श्रवण किया तो उस विदुषी को निमन्त्रण दे करके कहा तुम्हारे हृदय में यह विचार आए। उन्होंने कहा प्रभु! ऋषि के चरणों में ओत-प्रोत हो गए आचार्य ने कहा, मेरा प्रायश्चित क्या होगा? उन्होंने कहा सामवेद का अध्ययन करो। सामगान का अध्ययन करो। छह माह तक अनुष्ठान करो। तब इन तरङ्गों का तुम्हारा प्रायश्चित हो सकता है। उन्होंने इसी प्रकार का अनुष्ठान किया।

विचित्र अध्ययन प्रणाली से पवित्र राष्ट्र

विचार-विनिमय क्या है? यह शिक्षा की जो तरङ्गें हैं यह बड़ा सूक्ष्मतम रहस्य माना है। मैंने बहुत पुरातन काल में इस अध्ययन की प्रणाली को बहुत अध्ययन किया है। मैं इसको वर्णन करता रहूँ तो वर्षों समाप्त हो जाएँगे। मेरे पुत्र महानन्द जी यह कहते रहते हैं कि आधुनिक काल का जो राष्ट्र है, शिक्षा का माध्यम है वह इससे बहुत दूरी जा रहा है। मैं यह कहा करता हूँ कि कन्याओं को गृह सूक्त में और आयुर्वेद का अध्ययन कराने से राजा का राष्ट्र पवित्र बन सकता है। समाज की प्रणालियाँ पवित्र बन सकती हैं। संसार में राष्ट्र की आवश्यकता नहीं है।

मानव को कर्त्तव्यवादी बनने की आवश्यकता है और यदि कर्त्तव्यवादी मानव बन जाता है, एक-दूसरे का सहायक बन जाता है तो यह जो राष्ट्रवाद है एक-दूसरे के विचारों को नष्ट कर रहा है, जो अपनी स्वार्थपरता में समाज को मूर्ख बना रहा है, अपठित बना रहा है। ऐसे राष्ट्र की आवश्यकता नहीं रहती। तो विचार क्या कि राष्ट्रवाद की आवश्यकता नहीं रहती। तो विचार क्या कि राष्ट्रवाद तो अनुशासन है। अनुशासन में रहना अपनी प्रवृत्तियों में मानव जब अपनी इन्द्रियों का अनुशासन कर लेता है अपने आहार को पवित्र बना लेता है तो उसका राष्ट्र महान् सजातीय बन जाता है। मैं बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा अध्ययन करता रहा हूँ। उस अध्ययन की जो प्रणाली है वह बड़ी विचित्र रही है। जब एक प्राणी अपने में शुद्ध आहार करता है, शुद्ध व्यवहार में लगा हुआ है उसका जीवन एक महान् बना रहता है। मैं आधुनिक काल की चर्चा नहीं करता, मेरे प्यारे महानन्द जी वर्णन करते रहते हैं। समय मिलेगा तो उनकी यह चर्चाएँ होंगी।

आज का वाक्य हमारा क्या कह रहा है? भगवान् मनु से वेदकेतु मुनि की यह चर्चाएँ हुई कि हे प्रभु! आपके मन में यह विचार कैसे आया? तो भगवान् मनु ने कहा कि मैं समाज को एक ब्रह्मचर्य काल में, एक गृह काल में, एक वानप्रस्थ काल में परणित कराना चाहता हूँ। इस प्रकार उन्होंने माता के जीवन को एक मानवीय स्रोत बनाना चाहा। विचार क्या? संसार में मेरी प्यारी माताओं का आदर्श ऊँचा होना चाहिए। माता अपने में तपस्वी बन करके अपनी गर्भ की आत्मा से वार्ता प्रकट करने लगे जैसे आचार्य ब्रह्मचारी के अन्तर्हृदय को जान करके उसके हृदय में ज्ञान का प्रकाश कर देता है। जब इस प्रकार के विचार मानव के बन जाते हैं तो उसका जीवन बिखरता नहीं। उनका विचार सुगठित हो जाता है।

बहुत पुरातन काल की वार्ता है माता मदालसा अपने ब्रह्मचारियों

को ब्रह्मवेत्ता बना रही है, तो माता ब्रह्मवेत्ता ही दृष्टिपात करती रहती। वह ब्रह्मवेत्ता बन गए। जीवन बिखरता नहीं है। प्राण को, मन को सुचारू रूप से अपने में परणित कर लेते हैं। आज का विचार यह अब समाप्त होने जा रहा है। आज का वाक्य उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय क्या है कि हम समाज को परम्परागतों के जो अतीत का काल था उस समाज को दृष्टिपात करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है, जिन्होंने अपने जीवन को महान् बनाने का प्रयास किया। आज मैंने कुछ गृह की चर्चाएँ की हैं। मुनिवरो! आचार्य जब ब्रह्मचारी को इस प्रकार की शिक्षा देता है, वह गृह में आ करके अपने जीवन को खिन्न नहीं कर रहा है। वह प्राणायाम कर रहा है, साधना में भी है, क्रियाकलापों में भी लगा हुआ है। संसार में भी क्रियाकलाप कर रहा है, वह पृथ्वी की भूमि में बीज की स्थापना भी कर रहा है और उससे अन्नाद को ले करके अपने उदर की पूर्ति और समाज को भी ऊँचा बनाने का प्रयास करता है। इसी प्रकार हमें अपने जीवन को बनाना है और बना करके गृह-आश्रम में माता अपने पुत्रो को कैसे शिक्षा दे, यह चर्चा मैं कल प्रकट करूँगा।

आज मैंने अपने विचारों में कुछ गम्भीर वाक्य, वृत्तियों के वाक्य प्रकट किए हैं। कल समय मिलेगा तो भगवान् मनु के राष्ट्र में कैसे समाज में माता अपने पुत्रो को बाल्यों को पंक्ति लगा करके कैसे उपदेश देती थीं यह चर्चाएँ मैं कल प्रकट करूँगा। आज का वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

महर्षि महानन्द जी–अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद गुरुदेव–ओ३म् शान्ति!

दिनाँक : 11 मार्च, 1986
समय : दोपहर 3 बजे
स्थान : लाक्षागृह, बरनावा

।। ओ३म् ।।

माताओं का दिव्य दर्शन

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वह परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं। वह सर्वत्र विद्यमान हैं कोई स्थली ऐसी नहीं है जहाँ वह परमपिता परमात्मा न हों। आज का हमारा वेद मन्त्र हमें कुछ प्रेरणा दे रहा है हे प्राणाम् ब्रह्मा वरणस्थः हे मानव! तू संसार में जितने भी क्रियाकलाप कर रहा है उन सर्वत्र क्रियाकलापों में उस परमपिता परमात्मा की प्रेरणा से ही संसार के नाना क्रियाकलापों को करता रहता है, उन क्रियाकलापों में रत्त रहता है। जितना भी ब्रह्माण्ड है और यह मानवीय जगत् है सर्वत्र ब्रह्माण्ड में एक प्राणी प्राणी से प्रेरणादायक है, वह प्रेरणा से ही प्रेरित हो रहा है, एक-दूसरा प्राणी एक-दूसरा मानव, मानव से प्रेरणा पा रहा है। एक-एक वेद मन्त्र के ऊपर विवेचना कर रहा है। और वह विवेचना भी कोई प्रेरणा है। मानव उस प्रेरणा से प्रेरित हो करके वह वेद की आभा में रत्त हो जाता है।

गौमेध याग

आज का हमारा वेद मन्त्र हमें यह उच्चारण कर रहा था कि हे मानव! तू गौमेध याग करने का अधिकारी बन और तू गौमेध याग कर, वेद का वाक् गौमेध याग के सम्बन्ध में बहुत ऊँची-ऊँची उड़ानें

उड़ रहा है। गौ नाम के पशु के रूप में उसका वर्णन किया गया है और द्वितीय रूपों में गौ नाम इन्द्रियों के वृत्तियों को गौमेध कहते हैं और गौमेध आगे चल करके विचारों की रक्षा करने का नाम भी गौमेध याग है। तो हमारे यहाँ याग के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार की चर्चाएँ होती रही हैं। परन्तु एक न एक वाक्यों से ही याग के वाक्यों से प्रेरित होता रहता है और उस प्रेरणा को पा करके मानव अपने में सजातीय बन जाता है। मुझे स्मरण आता रहता है जब मैं एक बुद्धिमानों के काल में प्रवेश करता हूँ और माताओं के उस क्षेत्र में प्रवेश करता हूँ जहाँ मेरी प्यारी माता गौमेध याग करती हैं। गौमेध याग जो गर्भ में शिशु है उसकी जो रक्षा हो रही है उसमें जो ज्ञान की तरङ्गें प्रवेश की जा रही हैं वह भी एक गौमेध याग है, उसको **निर्वाणऽस्वति वाचक** भी याग कहते हैं। परन्तु वेद का वाक् गौमेध याग की यह विवेचना कर रहा है। हमारे यहाँ गौ नाम का पशु है आयुर्वेद की दृष्टियों में वह गौ नाम का पशु हमें नाना प्रकार के दुग्ध आहार करा करके और पय का प्रदान करके उसको मानव पालना कर रहा है, तो वह अपने में गौमेध याग है। परन्तु यागों का बड़ा विचित्र बड़ा विस्तृत विचार हमारे ऋषि-मुनियों ने परम्परागतों से माना है। याग का अभिप्राय यह है कि मुनिवरो! देखो गौ नाम की इन्द्रियों की हमें रक्षा करनी है। जहाँ गौ नाम के पशु का वर्णन आता है वहाँ गौ नाम इन्द्रियों का भी वर्णन आता रहता है। परन्तु आज मैं इन्द्रियों के सम्बन्ध में कोई गम्भीर विचार-विनिमय देने वाला नहीं हूँ। केवल विचार यह कि हमारे यहाँ गौ नाम के नाना पर्यायवाची माने जाते हैं।

विद्यालयों में गौमेध याग

आज तुम्हें गौमेध याग जो विद्यालय में होता है, मैं उस विद्यालय में जाना चाहता हूँ, जिन विद्यालयों में गौमेध याग ब्रह्मचारी और आचार्य अपने आसन पर विद्यमान हो करके जो याग हो रहा है, यह कहता

है आचार्य हे ब्रह्मचारी! तुझे गौमेध याग करना है। ब्रह्मचारी कहता है प्रभु मैं कैसे गौमेध याग करूँ। उन्होंने कहा **गौमेध याग का अभिप्राय यह है कि अपनी इन्द्रियों को तुझे सँयम में बनाना है।** कोई ब्रह्मचारी को कहता है तू गौमेध याग कर, तो याग का अभिप्राय यह कि पशु का पालन और पशु के सँयम, एक पशु जो बाह्य जगत् में है और एक पशु इन्द्रियों के रूप में विद्यमान है, दोनों पशुओं को अपने नियन्त्रण में लाना ही तेरा गौमेध याग है। गौमेध की विवेचना करते हुए आचार्य कहते हैं कि एक पक्ति में ब्रह्मचारियों को विद्यमान करके, हे ब्रह्मचारियो! आओ तुम गौमेध यागी बनो। ब्रह्मचारी प्रसन्न हो रहे हैं। वह कहते हैं महाराज गौमेध याग कराइए। मुझे स्मरण आता रहता है नाना ऋषि-मुनियों का वह काल जिस काल में विद्यमान हो करके मानव ऊँची-ऊँची उड़ानें उड़ता है, विचित्र-विचित्र प्रकार की उड़ानें उड़ता है, जिन उड़ान उड़ने वालों ने बहुत ऊँचे-ऊँचे अपने विचार दिए हैं। उन विचारों में आज मैं तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ।

परन्तु गौ नाम हमारे यहाँ पृथ्वी को माना है जब मानव पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करता है तो वह गौमेध याग कर रहा है और वह गौमेध याग करता हुआ अपने मानव जीवन को विचित्र और महानता की वेदी में लाने का प्रयास कर रहा है।

माता कुन्ती को पाण्डु द्वारा तपस्या की प्रेरणा

आज का विचार क्या कह रहा है? मेरे प्यारे! महानन्द जी ने इससे पूर्वकाल में अपने ऐसे विचार दिए जिन विचारों को हम श्रवण भी नहीं कर पा सकते, इन्होंने अपने विचारों में माताओं की इस विद्या का वर्णन किया जिन विद्याओं में माता देवता की पूजा करती हैं, माताओं को देवताओं की पूजा करनी चाहिए और प्रातःकालीन याग करना चाहिए, प्रातःकालीन याग में परणित रहना चाहिए। मुझे स्मरण आता रहता है मैं जब उस काल में प्रवेश करता हूँ जैसे हमारे यहाँ मेरे पुत्र

महानन्द जी ने इससे पूर्वकाल में प्रकट किया। उन्होंने द्वापर की वार्ता को लेते हुए कहा है, द्वापर के काल के शब्दों को ले करके उन्होंने कहा है कि हमारे यहाँ देखो राष्ट्रीयकरण में महाराजा शान्तनु का वर्णन आता रहता है, राजा शान्तनु की चर्चाएँ आती रहती हैं और उनकी देवी जो गङ्गोत्री थी उसकी भी चर्चाएँ आती रहती थीं। मुझे महानन्द जी ने तो अपभ्रंश वार्ता को प्रकट किया है परन्तु मैं शुद्ध और विशुद्ध रूपों में उन्हें स्वीकार करता रहता हूँ और विचार यह दिया इन्होंने कि गङ्गा के तट पर माता अपने ब्रह्मचारी को विद्या प्रदान कर रही है। एक ही वाक् नहीं है। कई कालों में मैंने तुम्हें प्रकट कराया है। हमारे यहाँ माताओं का इस संसार के ऊर्ध्वा बनाने में, गृहों को पवित्र बनाने में, राष्ट्र को ऊँचा बनाने में बड़ा सहयोग रहा है। उस सहयोग की चर्चाएँ आज मैं तुम्हें करने वाला हूँ। माता कुन्ती अपनी स्थली पर विद्यमान रहती थी और माता कुन्ती जब उसके गर्भस्थल में, एक समय महाराजा पाण्डु बोले कि हे देवी! मैं अपने विद्यालय में जब अध्ययन करता था और विद्यालय में जब मैं विचारधारा लेता रहता था तो कहीं मैंने देखो गृह वार्ताओं का अध्ययन किया है, गृह वृत्तियों का अध्ययन किया है कि हे देवी! मैं इस वाक् को स्वीकार करता हूँ परन्तु आज मैं तुमसे जानने की इच्छा प्रकट कर रहा हूँ कि मैंने यह अध्ययन किया है कि माता के गर्भस्थल में जब शिशु का प्रवेश हो जाए तो माता को तपस्या करनी चाहिए। तो देवी! तुम तपस्वी बनो। उन्होंने कहा हे भगवन्! हमने पुत्रयाग किया है हमारे यहाँ यागों का वर्णन करते हुए वैदिक-साहित्य में जितने भी शुभ कर्म हैं, जितने भी पिण्ड और ब्रह्माण्ड से मिलान करने वाले जितने भी शब्दों की रचना होती है उन सर्वत्र रचनाओं में इस याग का वर्णन आता है। हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों में परम्परागतों से ही एक वाक् बहुत प्रिय रहा है कि सर्वत्र विचारों को याग से उन्होंने कटिबद्ध किए हैं, याग से उनका समन्वय किया है। जैसे सूर्य की नाना प्रकार की जो किरणें हैं उन किरणों का समन्वय

हमारे यहाँ इस पृथ्वी से होता है, पृथ्वी प्रेरणा पाती है सूर्य से और सूर्य अपने में प्रकाशवान् है।

इसी प्रकार 'अप्रतम् ब्रह्माः प्रणयः' महाराजा पाण्डु यह कहा करते थे, उसका नाम ही **पण्डकेत्व** कहलाता था, पण्डकेश्वर नामक उनका नामोकरण था। परन्तु मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे प्रकट कराया था, इन्होंने वर्णन कराया कि वह पाण्डु रुग्ण में रहते थे। परन्तु पाण्डु उनके यहाँ रुग्ण नहीं था, उनका पण्डकेश्वर नामोकरण कहा जाता था जो अपने में देखो तपस्वी हो, पण्डकेश्वर मानो जो पञ्चमहाभूतों को अच्छी प्रकार अङ्ग और उपाङ्गों से जानने वाला हो उसका नामोकरण पण्डकेश्वर कहा जाता है। **पाण्डु का बाल्यकाल का नाम श्वेतकेतु था,** अहा बाल्यकाल का नाम श्वेतकेतु और विद्यालय में उनका नाम पण्डकेश्वर नियुक्त किया गया परन्तु देखो उनको पाण्डु नामों से उद्गीत गाने लगे। जब इस प्रकार का उद्गीत गाया जाने लगा तो कुछ मुझे ऐसा स्मरण है कि वही पण्डुकेश्वर अपने गृह में प्रवेश हुए और गृह में प्रवेश हो करके कुन्ती से तपस्वनी ब्रह्मवर्चोसि का पालन करने वाली, ब्रह्मयागी जो पुरुष होते हैं उनमें बड़ी विचित्र एक विशेषताएँ होती हैं। वह पण्डुकेश्वर देखो दोनों अपने में बुद्धिमान थे, कुन्ती अपने में बुद्धिमान, जब गर्भ में शिशु का प्रवेश हुआ तो सबसे प्रथम धर्मराज युधिष्ठिर का धर्मम् ब्रह्मः जो धर्म के मर्म को जानने वाले थे उनका जब प्रवेश हुआ तो वह प्रत्येक इन्द्री को सजातीय बनाने लगी, प्रत्येक इन्द्री को सजातीय बनाते हुए धर्म में इन्द्रियों को पिराने लगी और जो भी अन्नाद् पान करती वह भी धर्म है। **धर्म किसे कहते हैं?** धर्म कहते हैं उन गुणों को अपनाने को जो उसमें इस प्रकार के गुण होते हैं जैसे धर्म है। धर्म कहते हैं जैसे वाणी का धर्म है सत्य उच्चारण करना और मुनिवरो! देखो नेत्रों का धर्म सत्य को निहारना है और श्रोत्रों का धर्म सत्य ही श्रवण करना है और इसी प्रकार त्वचा का धर्म क्या है? सम्भूति ब्रह्मः लोकाम् हिरण्यम् वृथा वह अपने में एक महा पवित्रता की वेदी कही जाती है।

जब माता इस प्रकार के चक्षु में प्राणम् में पाहि, चक्षु में पाहि, प्राणम् में पाहि, श्रोत्रों में पाहि और घ्राण में पाहि, त्वचा में पाहि वह सब में धर्म ही देखती है। हे माता जब तू अपने में इन इन्द्रियों में धर्म ही देखती रहती है तो तेरे गर्भस्थल से धर्मराज पुत्र का जन्म होता है। यह विद्या तू जानती है इसी प्रकार के मन्त्रों का अनुष्ठान करना और इसी प्रकार का आहार करना, आहार भी धर्म से पिरोया हुआ होना चाहिए। राष्ट्रीय जो अन्नाद् है वह हमें रसातल की वृत्तियों में ले जाता है परन्तु जो धर्म धर्म से पिरोया हुआ होता है वह यज्ञ; वह अन्नाद् हमारे लिए पवित्र माना गया है।

मैं अपने पुत्र महानन्द जी के विचारों पर टिप्पणी तो देना नहीं चाहता हूँ, परन्तु विचार यह कि महाभारत काल में माताओं का कितना सहयोग रहा है। तो माता कुन्ती ने अपने में तपस्वी बन करके पाँचों पुत्रो को जन्म दिया। इसी प्रकार अग्रगणीय बन करके आगे वेद का आचार्य कहता है 'सम्भूति ब्रह्म वाचो देवम् ब्रह्माः' माताएँ अपने में सहयोगी बन करके उसका उद्गीत गा रही है, उसकी आभा में परणित कर रही हैं जिससे हमारा जीवन एक महानता की वेदी पर रत्त हो जाए। देखो माता कुन्ती इस विद्या को जानती थीं, वह कैसे प्रातःकालीन रात्रिकालीन कैसे अपने को तपस्या में ले जाए और अपने गर्भ के आत्मा से धर्म की गाथा प्रकट करने वाली हो। परन्तु देखो मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी ने जैसा प्रकट कराया, कल इनके विचारों में यह वाक् आ रहा था, उन विचारों में एक महावृत्तियाँ आ रही थीं कि वह देवताओं का नियोग माना जाता है 'देवाम् ब्रह्मा वृणम् बृहे' वह देवताओं की चर्चा में रत्त रहा है, ऐसा मुझे स्मरण कराया है। परन्तु मैं इन विचारों को नहीं दे रहा हूँ केवल विचार यह है कि यह एक पुनः एक विद्या है, इस विद्या का अध्ययन करना, विचारों में लाना, महानता का दर्शन करना एक मानवीयत्व माना गया है।

आत्मा एक रस

परन्तु मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक वाक् बड़ा महत्वपूर्ण प्रकट किया था कि सृष्टि की जब रचना हुई तो सृष्टि की रचना में इन्होंने एक वाक् कहा है कि कुछ मोक्ष के निकट आत्माएँ, कुछ पुरुष और कुछ देवियाँ, मेरा अभिप्राय यह है कि यह जो आत्मा हैं वह स्त्री और पुर्लिंग नहीं कहलातीं, यह आत्मा तो एक रस रहने वाली है, इसमें कोई लिङ्ग नहीं होता है। मेरे प्यारे महानन्द जी ने उसको लिङ्गन किया है, देखो कुछ देवियाँ, कुछ माताओं की आत्माएँ, कुछ पुरुष आत्माएँ, परन्तु आत्मा पुरुष और देवी नहीं होती, आत्मा तो एक रस रहने वाला है। हाँ यह कह सकते हैं कि कुछ माताएँ ऐसी हुई हैं जिन्होंने मोक्ष को प्राप्त किया है, कुछ माताएँ ऐसी हुई हैं जिन्होंने मोक्ष को लिया है। तो मेरे प्यारे महानन्द जी का कथन यह है कि आधुनिक विद्वान् या इससे पूर्व के विद्वान् यह स्वीकार करते हैं कि देवियों की मुक्ति न हो। परन्तु यह वाक् यथार्थ है जब उनका शरीर धारण है और वह जन्मदाता हैं पुत्र को जन्म दे देती हैं तो इनका जीवन तो कोई महापुरुष उत्पन्न हो जाए तो माता का नामोकरण तो वैसे ही पवित्र बन गया।

माताओं का मोक्ष गमन

मुझे स्मरण आता रहता है, माता मदालसा के जीवन की घटनाएँ मैंने तुम्हें कई कालों में प्रकट की हैं और देखो माता कुन्ती की चर्चा चल ही रही है कि जिस समय धर्मराज कहीं उद्गीत हो करके और वह यशोगान गाते थे और वह कहते थे कि यह माता का मुझे सहयोग है। **माता स्वर्ग कैसे जाती है, यह आज मैं तुम्हें वाक् प्रकट करना चाहता हूँ कि माता स्वर्ग में नहीं, मोक्ष में कैसे चली जाती है।** यह वाक् आता है देखो विद्वानों ने यह कहा है कि यह माताएँ पतित रहती हैं इसलिए यह मोक्ष नहीं जा सकती। यह वाक् उनका यथार्थ है कि माताएँ पतित नहीं होती हैं माताओं को पतित किया जाता है। पतित

कैसे किया जाता है? मानव समाज में सदियों से यह वाक् माना गया है इनके ऊपर नाना प्रकार का आक्रमण होता है, जैसा महानन्द जी ने कहा है। वह आक्रमण जो प्रणाली है वह सच्ची नहीं हैं। देखो त्रेता के काल में भी कहीं-कहीं उन पर आक्रमण हुआ है। मैं यह नहीं कहता हूँ कि आधुनिक काल में आक्रमण विशेष हुआ है, परन्तु उस काल में आक्रमण एक अपवाद में माना गया है। जैसे हमारे यहाँ कौशल्या का देखो राम के काल में जीवन आता है। **माता कौशल्या** का जो जीवन था बड़ा पवित्र और विदुषी जीवन था। राजा रावण ने कहीं यह जान लिया कि यह जो कौशल्या है इसके गर्भ में तेरे मृत्यु के मूल का जन्म होगा। तो उस समय कौशल्या को उन्होंने राजा के यहाँ से कौशल देश में जा करके गङ्गा को एक आसन पर विद्यमान करके उसे देखो एक सन्दूक वृत्तियों में बन्द करके और समुद्र में त्याग दिया था। जब समुद्र में त्याग दिया तो कैकेई और राजा दशरथ कहीं युद्ध में गए और वह उन्हें प्राप्त हो गई। तो उसमें से वह राजा के यहाँ उस कन्या का आगमन हुआ और राजा दशरथ से उसका संस्कार हुआ। इस प्रकार के अपवाद तो माने जाते हैं, परन्तु उसके पश्चात् जो कौशल्या का सहयोग रहा है, जो कौशल्या का तप रहा है, वह मुझे स्मरण है। वह बड़ा अद्वितीय कहा जाता है।

इसीलिए मैं माताओं की चर्चा क्या, मैं एक वार्ता प्रकट कर रहा हूँ। परन्तु मानव अपने स्वार्थ में आ करके आक्रमण कर सकता है, अपने प्रभुत्व में आ करके आक्रमण कर जाता है। परन्तु उस आक्रमण में भी कोई न कोई रहस्य होता है। तो विचार क्या? देखो मेरे पुत्र ने पूर्वकाल में यह प्रकट किया था कि आत्माओं का मोक्ष होना, 'मेरी देवियों ने यह भी कई कालों में, जैसे देखो **मैत्रेयी** का जो जीवन था और वह बड़ा विचित्र था। मैत्रेयी जब तपस्या करती रहतीं, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज विद्यालय में तप करते रहते थे और माता मैत्रेयी अपने को भयङ्कर वनों में, वह तपस्या में, गायन में रत्त रहती थीं। मुझे स्मरण कराया महानन्द

जी ने कि मध्यकाल में ऐसा हुआ है, पाश्चात् काल में ऐसा हुआ कि मेरी पुत्रियो को वेद के शब्दों का अधिकार नहीं रहा। तो वह आक्रमण किसने किया है? यह पामर प्रवृत्तियों वाले प्राणियों ने आक्रमण किया है। मैं महानन्द जी के शब्दों की विचारधारा प्रकट कर रहा हूँ। मेरे पुत्र ने यह वर्णन कराया कि इस प्रकार के जब आत्मा होते हैं तो समाज में कुरीतियाँ आ जाती हैं, इनके सन्तानों का जन्म नहीं होता है। उनके सन्तान का जन्म जब होता है जब माता स्वतन्त्र रूप से तपस्वी होती है और तपस्या करने वाली होती है। कैसे तपस्या करती है? देखो मुझे काग्भुषण्ड जी की वार्ता स्मरण आ गई है। महर्षि काग्भुषण्ड जी की जो माता थी **स्नेहलता**, जो उसकी लोरियों में बालक पान, आनन्द लेता रहता था, मधुर अमृत को पान करता रहता था, तो माता एक पंक्तियों में विद्यमान हो करके ब्रह्मचारियों को महान् बनाना और काग्भुषण्ड जी की माता प्रीति में आ करके उसको कागा कहा करती थीं। उसका नाम जो **सोजनी ब्रह्मचारी** था बालक नाम सोजनी ब्रह्मचारी और देखो जब वह प्यार प्रीति में आती थी तो माता उसे कागा कहा करती थीं। वह कागा क्यों कहती थीं, क्योंकि बाल्यकाल में जो दो विधाता और थे उनके अन्न को भी वह पान कर जाता था। जब वह उनके अन्न को पान कर जाता था तो माता मग्न हो करके यह कहती तू कागा है, तू कागा प्रवृत्ति वाला है। तो माता ने जब ऐसा कहा तो उनका नाम कागा हो गया, परन्तु देखो काग्भुषण्ड जी उनके नामों को उच्चारण करने लगे। भुषण्डी उस काल नामोकरण, यह लोमश मुनि ने उनका नाम भुषण्डी रख दिया। **देखो कागा तो माता का दिया नाम था और भुषण्डी महर्षि लोमश जी कहते थे** और वह क्यों कहते थे जब वह विद्यालय में अध्ययन करते थे, तो **महर्षि लोमश और महर्षि काग्भुषण्ड जी के गुरु थे आचार्य श्रुति ऋषि महाराज।** श्रुति ऋषि महाराज के द्वारा जब अध्ययन करते थे तो वह दोनों सङ्ग-सङ्ग प्रीति से योगाभ्यास करते थे। जब योगाभ्यास करते, व्याकरण का अभ्यास करते, शब्दों की रचना

करते रहते थे और परमपिता परमात्मा के स्वरूप का दर्शन करने लगते थे। तो वह उनको भुषण्डी जी कहते थे और भुषण्डी जी क्यों कहते थे क्या उनकी बुद्धि किसी-किसी काल में निर्धन हो जाती थी। जब बुद्धि निर्धन हो जाती तो उसको लोमश जी भुषण्डी जी कहते थे मग्न हो करके। तो इस प्रकार के नामोकरणों की रचनाएँ हुई जब रचनाएँ हुईं, इन्ही रचनाओं का प्रादुर्भाव यह हो सकता है कि समाज में उनको काग्भुषण्ड जी, एक कागा के नामों से उसके अर्थों का मोदन करना प्रारम्भ कर दिया हो।

परन्तु देखो इस वाक्य को न लेता हुआ विचार क्या, कि इस प्रकार मेरे प्यारे महानन्द जी ने यह उच्चारण किया कि कुछ माताओं का आत्मा का मोक्ष हुआ है। माताएँ माक्ष को गई हैं और वह मोक्ष के निकट भी गई हैं जैसे हमारे यहाँ देखो चाक्राणी गार्गी का वर्णन आता है, तो **चाक्राणी गार्गी** को मोह नहीं होता था। एक समय उसके पिता भी विद्यमान थे और विद्यमान हो करके पिता ने अपने में प्राणायाम करके अपने शरीर को त्याग दिया। तो चाक्राणी गार्गी अपने पिता को अग्नि के मुख में प्रवेश करके और यह कहा हर्ष ध्वनि करते हुए कि जैसे तेरा अन्तरात्मा गया है चित्त के मण्डल को पार करके, ऐसे मेरा आत्मा चला जाए। वह मोह ममता में नहीं एक सङ्कल्प कर रही है। तो गायत्रियों का जपन कर रही है और उनकी वृत्तियाँ इस प्रकार की थी कि सर्पराज उनकी ध्वनि का श्रवण कर रहा है मृगराज जो हिंसक है वह ध्वनित हो रहा है तो उसकी वाणी में कितना तप होगा यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता। किसी-किसी में कोई ऐसी जो अप्रत्तियाँ हैं कि जिसको मापदण्ड से मापा नहीं जा सकता, इन वाक्यों को उच्चारण कर सकते हैं। जिसकी वाणी में इतना तप हो, उसकी प्रत्येक इन्द्रियों में तप है, वह धर्म और मानवीयता से सजातीय है। तो जब चाक्राणी गार्गी का प्राणान्त होने लगा, जाने लगी, तो वह वेद का गान गा रही है, सामगान गा रही है। सामगान उन्हें बड़ा प्रिय लगता

था, जब वह सामगान गाती थीं तो तरङ्गें आती रहती थीं। देखो चन्द्रमा की आभा उनमें निहित होती रहती थी। जब वह गान गाने लगीं, तो वहीं भयङ्कर बन में सर्पराज है, मृगराज हैं, वहीं सिंहराज विद्यमान हैं, महर्षि स्वाति मुनि महाराज भी विद्यमान हैं। वह कहती है अपने प्रभु से वेदवाणी का उद्गीत गाती हुई है, मैं तेरी इस पगडण्डी को पान करना चाहती हूँ। यह उच्चारण करते-करते प्राणसखा उस आत्मा को ले करके, चित्त के मण्डल में, चित्त के मण्डल से अपने प्राणों में प्रवेश करके, देवी का मोक्ष हो गया। **मोक्ष का अभिप्राय क्या, कि जिसके जितने व्यापक विचार बन जाएँ,** जो मानव में, मनुष्य में और देखो सर्पराज में, हिंसक और अहिंसक में, किसी प्रकार का मतभेदन नहीं रहता है विचारों में, उस मानव का आत्मा पवित्र बन जाता है, आत्मा एकरस रहने वाला है। एक रसता में जब परणित हो जाता है तो प्रभु की पगडण्डी को प्राप्त कर लेता है।

परिणाम क्या है? मेरे प्यारे महानन्द जी ने कहा है कि यह देवियाँ कुछ मोक्ष के निकट थीं, कुछ मानव ऋषि-मुनि निकट थे, उन्होंने अपने पाँचों तत्वों के आभा को अपने में ग्रहण कर लिया। आत्मतत्वों में इतनी एक सङ्कल्प शक्ति बनी रहती है कि **सङ्कल्पमयी जगत्** होता है। हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के जगत् होते हैं, एक रचनात्मक जगत् होता है, एक हमारे यहाँ सङ्कल्पोमयी जगत् होता है। मानव अपने को पवित्र बना लेता है, तो सङ्कल्प आया कि मेरी देवी (वेदी) पवित्र बन जाए तो वह देवी पवित्र व सङ्कल्पमात्र से उससे कर्म की आभा को अपने अन्तःकरण में निहार लेता है। तो परिणाम यह सङ्कल्पमयी सृष्टि है, एक सङ्कल्पमयी क्रियाकलाप है, एक मानव विद्यमान है, वह प्राणों का सङ्कल्प कर रहा है, प्राण आ रहा है, प्राण जा रहा है, वह सङ्कल्पोमयी प्राणायाम् कहलाता है। जब इतना मानव का सङ्कल्प विचित्र बन जाता है कि एक-एक पहर का एक-एक साँस की गतियाँ प्रबल बन जाती हैं। तो जिस समय वह योगेश्वर अपने शरीर को त्यागता है, तो वह

भी मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है। तो परिणाम क्या? एक व्यापक विचारों का बनाना है, हमें सङ्कीर्णता से इस संसार को निहारना नहीं है। विचार क्या है, इस प्रकार मेरी प्यारी माता अपने जीवन को क्रियात्मक बना लेती है।

एक समय मुनिवरो! देखो मुझे स्मरण है माता वृहे वस्तुतम् ब्रह्मा **माता मैत्रेयी** के हृदय में यह सङ्कल्प जागा, एक समय मधुविद्या का पान करा रहे थे याज्ञवल्क्य मुनि महाराज। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से देवत्व मध्यरात्रि में बोली कि हे प्रभु! मैं अपनी आत्म तृप्ति के लिए पुत्र याग करना चाहती हूँ। उन्होंने कहा बहुत प्रिय, तो मैत्रेयी ने पुत्रयाग किया और उसके पश्चात् उनके गर्भ से एक बालक का जन्म हुआ। तो माता मधुविद्या का अध्ययन कर रही है, मधुविद्या का अध्ययन करते हुए संसार के सम्पर्क में नहीं है, केवल प्रभु से, आत्मा से वार्ता प्रकट कर रही है। वही ब्रह्मचारी आगे चल करके मुनिवरो! देखो **महर्षि श्वेतकेतु** के रूप में बना, वही आगे चल करके **गोरवृत्ति** देखो ऋषि बना, और वही आगे चल करके **रेणकेतु मुनि** बन गया। तो विचार क्या मुनिवरो! माता तो जन्म देती है, पालना करने वाली है और पालना में भी ज्ञान देती है और ज्ञान दे करके जब माता इस प्रकार की होती है, तो वह माता अपने को धन्य मोह ममतामयी कर रही है, प्रीति कर रही है और **प्रीति में जीवन होता है, प्रेम में जीवन होता है, मोह में मृत्यु होती है।** इसलिए मानव को विचारना है, माता यह जानती थी मैत्रेयी तुझे प्रेम करना है, मानव तुझे मोह ममता नहीं करनी है, मोह नहीं करना है, ममता नहीं करनी है, प्रीति करनी है, प्रेम करना है। क्योंकि देखो प्रेम से जुड़ा हुआ यह संसार है, यह प्रेम से सङ्कल्प हो रहा है। परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में जब मानव (मानो) प्रकृति से अपनी प्रीति की, तो यह जगत पिण्ड बन गया, जब और प्रीति की तो दृष्टिपात आ गई उग्रगति से इस संसार का विभाजन हो गया। यह ब्रह्माण्ड के रूप में दृष्टिपात आने लगा। इसका

नाम है प्रेम, इसका नाम है स्नेह। स्नेह और प्रीति करनी है, मोह नहीं करना है, मोह करोंगे तो तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी। जो माता यह जानती है कि तुझे कुछ योग्य बनाना है **माता मदालसा** की भाँति, माता मदालसा ने जब वह मनु वंश में संस्कृति हुई और उन्होंने जब तीन पुत्रो का जन्म हुआ, तीनों पुत्रो से प्रेम किया, मोह नहीं किया और मोह न करने से प्रेम किया और प्रेम ने उन्हें ब्रह्मवेत्ता बना दिया। पाँच वर्ष का ब्रह्मचारी ब्रह्म की उड़ान उड़ रहा है, ब्रह्म से वार्ता प्रकट कर रहा है, माता से प्रश्न कर रहा है, शास्त्रार्थ कर रहा है और वह माता प्रेम से उन्हें ब्रह्म का उपदेश दे करके ब्रह्मवेत्ता बना रही है। वही माता मोक्ष को चली गई। माता मदालसा का जीवन जब स्मरण आता है, तो वह तीन सन्तानों को जन्म दे करके एक को राजा बना करके और गायत्री छन्दों का पठन-पाठन करके, वह श्रुति में परणित हो करके, परमपिता परमात्मा की इच्छा प्रकट कह करके शरीर को प्राण के द्वारा त्याग दिया। प्राण के द्वारा त्याग करके वह मोक्ष के आँगन में प्रवेश हो गई। मोक्ष नहीं हुआ मोक्ष के निकट हो गए, निकटतम में अगले-अगले लोकों में जन्म ले करके उसका मोक्ष हो गया।

परिणाम क्या? मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ महानन्द जी के विचारों के ऊपर टिप्पणियाँ दे रहा हूँ और वह टिप्पणियाँ क्या हैं कि मानव को विचारना है, **व्यापक विचारों में जब हम चले जाएँगे तो हमारा वास्तव में मोक्ष हो जाएगा।** यह विचार एक आक्रमणीय विचार है कि देवियाँ मोक्ष में नहीं जा सकतीं। अरे जब यह आत्मा है, जब यह ज्ञानी बन सकती है, देखो ज्ञान और कर्म इनकी आत्मा का मौलिक गुण वह सर्वत्रता में इस प्रकार का क्रियाकलाप जब कर सकते हैं, तो मोक्ष में क्यों नहीं जा सकते। आज का देखो यह विचार, मैंने बहुत पुरातन काल में यह निर्णय दिया है। मुझे स्मरण आता रहता है, मैं त्रेता के काल की, द्वापर के काल की भी चर्चा करता रहता हूँ। जब मुझे यह वाक् स्मरण आता है कि राम वन को जा रहे हैं और माता

कौशल्या प्रसन्न हो करके कह रही है ''जाओ वन चले जाओ'' माता रुदन नहीं कर रही है, मोह नहीं कर रही है क्योंकि वह यह जानती थी कि तूने तपस्वी बालक को जन्म दिया है। मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय मुझे इसकी नाटकीय चर्चा प्रकट कराई। मैं यह कहता रहता हूँ कि नाटकीय चर्चा नहीं होनी चाहिए। इससे साहित्य और महानता का ह्रास होता है। माता रुदन नहीं कर रही है, वह कहती है कि राजा को मोह है राजा की मृत्यु हो गई है और मुझे मोह नहीं है, जाओ तुम वन जाओ। राजा की मृत्यु होने वाली है, माता यह कह रही है क्योंकि वह यह जानती थी कि राजा की मृत्यु हो जाएगी। माता प्रसन्न हो रही है और कहती है कि भयङ्कर वन में जा करके इस समाज को तुम्हें ऊँचा बनाना है, इस समाज को तुम्हें महान् बनाना है। मैंने तुम्हें जन्म दिया, यह कहकर के राम को आज्ञा दी। देखो कैकेयी की तो आज्ञा द्वेषपूर्ण नहीं थी, कौशल्या की भी भावना पवित्र थी, जब माता के इस प्रकार के विचार होते हैं, उन विचारों में स्वर्ग आ गया है और वही विचार जब ऊर्ध्वागति में चले जाते हैं वही विचार उड़ान के साथ में चित्त के मण्डल के पार हो करके मोक्ष की पगडण्डी को प्राप्त कर सकते हैं। तो इस प्रकार का विचार मैं देना चाहता हूँ। मुझे वह साहित्य स्मरण आता रहता है कौशल्या जी से बहुत ऋषि-मुनियों ने कहा आचार्यों ने कहा कि तुम राम को आज्ञा दे रही हो? उन्होंने कहा, मैंने तो जन्म दिया है, मेरे जन्म का अभिप्राय यह नहीं है, वास्तव में इसका जन्मदाता प्रभु है और मैंने इसको विचार दिया है इन विचारों से मैं सपनों को सार्थक बनाना चाहती हूँ, यह माता कौशल्या ने कहा।

विचार-विनिमय क्या? मैं यह बिखरे विचारों को तुम्हें इसलिए दे रहा हूँ कि मेरे प्यारे महानन्द जी ने वर्णन कराया कि कुछ देवियों का मोक्ष हुआ। परन्तु देखो वह तो हम कह रहे हैं, यह कहते हैं कि कुछ देवी आत्माएँ थीं परन्तु वाक् इनका विकृतता में चला गया। यह

वाक् यथार्थ नहीं क्योंकि आत्मा तो एक लिङ्ग है वह पुर्लिङ्ग या स्त्रीलिङ्ग नहीं कहलाता। इसलिए उनका यह अद्भुत उच्चारण करना, यह राष्ट्र बन जाता है।

विचार-विनिमय क्या? उस समय 'ब्रह्मयन् ब्रह्मः कृतानाम्' तो इसीलिए विचार मेरा यह चल रहा है कि संसार में प्रेम होना चाहिए। संसार में कर्त्तव्य होना चाहिए, अकर्त्तव्य में मोह आ जाता है। अकर्त्तग्व्य में विडम्बना आ जाती है। वही विडम्बना राष्ट्र और समाज का विनाश कर देती है। तो विचार-विनिमय क्या? आज का विचार हमारा क्या कह रहा है, कि बिना विवेक के राष्ट्र का पालन नहीं हुआ करता है, यह परम्परागतों का वाक् है। राजाओं ने देखो परम अतीत के काल में अनुष्ठान किए हैं, तपस्याएँ की हैं और जब उन्होंने, ब्रह्मवेत्ताओं ने उन्हें राष्ट्र की उपासना प्रदान की है।

भगवान् राम का राष्ट्र

मुझे स्मरण आता रहता है जब राम लङ्का को विजय करने के पश्चात् अयोध्या में आए, प्रतीक्षा हो रही है और देखो सर्वत्र नगर प्रतीक्षा कर रहा है। जब राम अयोध्या में पधारे तो ऋषि-मुनि भी प्रतीक्षा कर रहे हैं। जब राम आए तो उनका ऋषि-मुनियों ने स्वागत किया और स्वागत करने के पश्चात् देखो उन्होंने यह वाक् अपने में उच्चारण किया कि मैं राष्ट्र का अधिकारी नहीं हूँ। वशिष्ठ मुनि बोले राम तुम क्यों नहीं अधिकारी हो? उन्होंने कहा मैंने एक राष्ट्र की क्रान्ति की है, कर्त्तव्य में, तपस्या में अपने विचारों को मेरे अन्तःकरण में जो संस्कार सँग्राम के बने, जो भी विचित्र वृत्तियाँ बनी हैं, उन्हें जब तक मैं समाप्त नहीं कर लूँगा सात्विकता नहीं आएगी, तब तक मैं राष्ट्र का या प्रजा का पालन नहीं करूँगा। तो राम ने बारह वर्षों तक और तप किया और तप करने के पश्चात् जब वे इस अयोध्या में आए तो उस समय वशिष्ठ मुनि, महर्षि लोमश ने और आदि-आदि ऋषियों ने राम का राजतिलक

किया और वह राष्ट्र के अधिकारी बने। उन्होंने प्रजा में जब कहा कि मैं अब राष्ट्र का अधिकारी बन गया हूँ, मेरे में गायत्री माता का प्रभाव आ गया है, वेदध्वनि मेरे में ध्वनित हो गई है, मुझे विवेक हो गया है। मैं वास्तव में राष्ट्र को चाहता नहीं हूँ, परन्तु जब ऋषि-मुनियों की आज्ञा है, तो मैं इनकी आज्ञा का पालन करूँगा, मैं राष्ट्र का अभिलाषी नहीं हूँ। तो राम ने यह वाक् कह करके और राष्ट्र को अपनाया। तो राम की जो स्थापना हुई है राष्ट्र की, वह बड़ी विचित्र रही है। राम ने माताओं का पूजन किया और यह घोषणा की राष्ट्र में कि मेरे राष्ट्र में एक मानव हो तो एक उसकी देवी होनी चाहिए, परन्तु दोनों का परस्पर प्रेम होना चाहिए। द्वितीय नियम उन्होंने लगाया कि राष्ट्र में याग होना चाहिए, याग विचारों का हो, ब्रह्मयाग का हो अथवा देखो देवयाग वेदों की ध्वनि प्रत्येक गृह में से आनी चाहिए। मेरे गृह में भी यही ध्वनि आती रहेंगी। तो राम ने यह तो नियमावली बनाई और राष्ट्र के बहुत से उद्गीत बनाए परन्तु वैज्ञानिक हुए, उन वैज्ञानिकों की धाराओं में रत्त रहने लगे। तो विचार-विनिमय क्या, राम ने यह कहा कि राष्ट्र हमारा याग रहेगा और यज्ञ राष्ट्र में रहेगा और राष्ट्र यज्ञ में रहेगा। तो प्रत्येक मानव कर्त्तव्य का पालन करेगा और जब कर्त्तव्य का पालन करेगा तो राष्ट्र में एक-दूसरे में कुरीति नहीं आएँगी। अपने-अपने सामान्यतया में, अपने क्रियाकलापों को करता रहेगा। तो राम ने देखो यह घोषणा की और अयोध्यापुरी स्वर्ग बन गया, अयोध्यापुरी महान् बन गयी।

तप की महत्ता

विचार-विनिमय यह है कि बिना तप के राष्ट्र का पालन नहीं होता, क्योंकि **तप होगा तो बुद्धि होगी और बुद्धि होगी तो ज्ञान होगा और ज्ञान होगा तो वह कर्त्तव्य का पालन कर सकेगा** और प्रजा में एक महानता का दर्शन करा सकेगा। मानव दर्शन कर सकेगा और देखो

वह महापुरुषों की आज्ञा पा करके राष्ट्र को त्यागते समय उसे विडम्बना नहीं होगी। वह राष्ट्र को त्याग करके पुनः तपस्या भी कर सकता है और जब तक तपस्या नहीं आती तब तक देखो राजा के राष्ट्र में विक्रतता रहती है, मृत्यु हो जाती है। हे राजा! तेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए, वेद का ऋषि कहता है तेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए और तेरी मृत्यु किस काल में होती है, जब होती है तब तेरे राष्ट्र की प्रजा एक-दूसरे प्राणी से मानो विडम्बित रहती है और राजा तेरे से प्रजा विडम्बित रहती है। परन्तु देखो इस प्रकार जो राष्ट्रीय प्रणाली है वह विचित्र होनी चाहिए। यदि जिस राजा के राष्ट्र में मेरी पुत्रियाँ अपने शृंगार को हनन करके अपने उदर की पूर्ति करती हैं, वह राष्ट्र नहीं हुआ करता है। यह वाक् ही तो हमारे यहाँ पुरातन काल के ऋषि-मुनियों ने कहा है और जैसे मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे प्रकट कराया है और इन्होंने अपना वक्तव्य दिया है, अपना विचार दिया है। इन्होंने विचार देते हुए कहा है 'सम्भवा लोकाम् ब्रह्म वाचो ब्रवणाह' मेरे प्यारे महानन्द जी ने विचार यह दिया कि राजा हिंसक बना हुआ है। अरे! हिंसक नहीं 'अहिंसा परमो धर्मः का पालन करना है, भगवान् मनु के राष्ट्र का अनुमोदन करो, भगवान् राम की विचित्रता और भगवान् राम और मनु जी के सिद्धान्त को लो। मनु जी जैसे एक मछली की रक्षा कर रहे हैं और देखो वही आज मेरे प्यारे महानन्द जी यह कहते हैं कि उनका भक्षण किया जाता है। यह कोई राष्ट्रीयता की नियमावली नहीं है।

आज का हमारा विचार यह कहता है कि मानव यह कहता है कि आहार कहाँ से आए, यदि इसका भक्षण न करें। मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय कहा था, उसका उत्तर यह महानन्द जी ने दिया और हमने भी उसमें कुछ टिप्पणियाँ दीं कि मानव को तो, प्रत्येक मानव को अपने विचारों को महान् बनाना है। परन्तु देखो वह दूसरे के विचारों को महान् उसी प्रकार की टिप्पणियाँ न देता हुआ, जब प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक मानव अपने में कर्त्तव्य का पालन, अपने में अहिंसा परमोधर्मः

का पालन करता रहेगा, तो यह समाज महान् पवित्र बनेगा। सर्पराज तुम्हारे आँगन में खिलवाड़ करेंगे, सिंहराज आ करके तुम्हें भक्षण नहीं करेंगे, जैसा मैंने पुरातन काल में पुत्र को वर्णन करते हुए कहा था कि महाराजा दिलीप जब नन्दनी के पीछे अपना गमन कर रहे थे, ब्रह्मवर्चोसी का पालन कर रहे थे, तो मृगराज ने नन्दनी के ऊपर आक्रमण किया और राजा कहता है हे सिंहराज! तू मुझे आहार कर, यह मेरी पूज्य है। तो सिंहराज उनके तप के आगे मौन हो गया और नन्दनी को त्याग दिया और यह अपने विचारों में कहा कि मैं ऐसे प्रतापी राजा का आहार नहीं कर सकता, जिसमें हमारी मृत्यु न होती हों, जिस राजा के राष्ट्र में कोई मृगराजों पर, सिंहराजों पर आक्रमण करने वाला न ही मनुष्य है, तो ऐसे प्रतापी राजा को ऐसे विवेकी राजा को जो गौ की रक्षा कर रहा है, प्रत्येक प्राणी की रक्षा कर रहा है, उसकी मृत्यु नहीं होनी चाहिए।

मैं बहुत दूरी न चला जाऊँ, इस संसार को बहुत समय हो गया दृष्टिपात करते हुए, ब्रह्माण्ड मस्तिष्क में विद्यमान है। मैं इस ब्रह्माण्ड में से वार्ता ला-ला करके तुम्हारे समीप लाता रहता हूँ। विचार-विनिमय क्या है, जब माता के शरीरों में आत्मा है, मानवता है और उत्पन्न करने की शक्ति है, शिक्षा देने की महानता और क्षमता है तो वह मोक्ष को क्यों नहीं प्राप्त हो सकती? मुझे कोई उत्तर नहीं देता इस वाक्य का संसार का प्राणी, कोई भी उत्तर नहीं देता। यह कहते हैं कि सङ्कीर्णता है, तो मानव मानव को दमन करते रहो तो उसमें सङ्कीर्णता आ जाएगी। मेरे प्यारे पुत्र ने बहुत से वाक् बड़े विचित्र प्रकट किए, परन्तु आज का हमारा विचार केवल उन विचारों की टिप्पणी पर चला गया है।

विचार क्या है? आज का हमारा विचार यह क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, याग जैसे कर्मों को जो हमारे ऋषि-मुनियों ने यह कहा है कि हे माता! तू पुत्र को

जन्मीय संस्कार करना चाहती है, गर्भ में बिन्दु का प्रवेश करना चाहती है तो उसके पश्चात् भी तू याग कर। जब गर्भ में तीन माह का बिन्दु हो जाए, वहाँ भी याग कर, जब वह आपूर्त्त हो जाए, वहाँ भी याग कर, जन्म हो जाए, संसार में आ जाए, वसुन्धरा से पृथ्वी की गोद में आ जाए, तो वहाँ भी याग कर। यागों से मानव का जीवन साहित्यकारों ने भरण कर दिया है। वाह रे साहित्यकारो! तुम्हें धन्य है, तुमने वैदिक वाक्यों में इसे नाना प्रकार के विचार दिए हैं। मुझे स्मरण आता रहता है एक हमारे यहाँ अगस्त मुनि हुए हैं जो मैंने कई कालों में प्रकट किया है वहाँ उनकी माता का नाम अरुणकेतु था। **अरुणकेतु माता** ने अपने विचार दिए हैं एक पोथी उन्होंने लेखनीबद्ध की है और उस पोथी में मानव के देखो बिन्दु के प्रवेश और जन्म होने से पूर्व से उन्होंने लेखनियाँ बद्ध कीं। गर्भ में क्या, बाल्यकाल में क्या युवा तक देखो उस अन्नाद् को प्राप्त होने तक उन्होंने लेखनियाँ बद्ध कीं और वह पोथी विद्यमान है। उसको हमारे यहाँ **जीवन सारिणी पोथी** कहा जाता है। उस पोथी में संसार की सर्वत्र वार्ताएँ हैं। जब यह विचार मेरे समीप आते रहे हैं तो माताओं का कितना ऊर्ध्वा सहयोग रहा है और माता ने तपस्या करते-करते बालक को योगी बना दिया, पति देवयोगी बन गए, स्वतः योग में प्रवेश हो करके मोक्ष की पगडन्डी को ग्रहण कर लिया। तो विचार-विनिमय क्या, **आज का विचार यह** कि परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए तू मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर। हे मानव! तू अपने आनन्द की पगडण्डी को ग्रहण कर। हे मानव! तू प्राणशक्ति को जानने वाला बन।

आज का विचार क्या, आज के विचारों का उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और गौमेध याग करते चले जाएँ। गौमेध याग का वर्णन है कि अज्ञान से प्रकाश में जाने का नाम गौमेध याग कहा जाता है। जो मानव गौमेधयाग करना जानता है, गौ कहते हैं देखो पशु को, गौ नाम इन्द्रियों

का है, गौ नाम बुद्धि का है, गौ नाम पृथ्वी का है, गौ के नाना पर्यायवाची शब्द हैं। परन्तु विचार यह है कि उनके मूल में यह कि जो गौ है **जो अन्धकार से प्रकाश में पहुँचाता है वह गौमेध याग कर रहा है।**

यह है बेटा! आज का वाक् कल मुझे समय मिलेगा, शेष चर्चाएँ तुम्हें कल प्रकट करूँगा। आज का वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि **हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, मानव जीवन को सार्थक करें।** आज मैं याग के ऊपर अपना एक विचार दे रहा हूँ। आज का विचार समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

महर्षि महानन्द जी—अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद गुरुदेव—ओ३म् शान्ति!

दिनाँक : 15 मार्च, 1986
समय : दोपहर 3 बजे
स्थान : लाक्षागृह, बरनावा

आवश्यक सूचना

सभी वार्षिक सदस्यों को सूचित किया जाता है कि जिन सदस्यों ने अभी तक वार्षिक सदस्यता की राशि जमा नहीं की है वह कृपया करके मनीआर्डर द्वारा समिति के कार्यालय में या प्रकाशन मंत्री को वार्षिक सदस्यता की राशि भेज दें जिससे कि पत्रिका निरंतर प्रेषित होती रहे।

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. वेद सबसे प्रथम चरित्र की घोषणा करता है।
2. चित्त का भोजन क्या है? अन्तःकरण अथवा चित्त का भोजन ''ज्ञान'' है।
3. देवी नाम श्रद्धा का है। श्रद्धा रूपी देवी जब जागरूक हो जाती है तो मानव का हृदय पवित्र बन जाता है।
4. मानवता, चरित्र की महत्ता और यज्ञमय जीवन को बनाना ही देवी की पूजा है।
5. देवी पूजा का अभिप्रायः है अपने आचरणों को पवित्र बनाया जाए और यज्ञ किया जाए।
6. हमें देवी यज्ञ करने चाहिए परन्तु उनके साथ यौगिकवाद, मानववाद होना चाहिए।
7. यज्ञ तो दूसरों की रक्षा करने के लिए होते हैं।
8. जब अन्तरात्मा में यज्ञ करते है तो मानव को सर्वत्र वस्तु प्राप्त हो जाती है।
9. यह जो ज्ञानेन्द्रियाँ है, कामेन्द्रियाँ है इनके विषयों की सामग्री बना करके यज्ञ करोगे तो तुम्हारा जीवन वास्तव में भाग्यशाली बन जाएगा।
10. जितने यज्ञ होंगे उतना राष्ट्र व वायुमण्डल ऊँचा बन जाएगा।
11. सतयुग के काल में चैत्र मास में प्रतिपदा से लेकर अष्टमी तक यज्ञ रहता था।
12. चित्त की वृत्तियों का निरोध करने को कहा है यह पञ्चक याग कहलाता है।
13. चित्त उस काल में शान्त होता है जब न तो मानव के द्वारा क्रोध रहे, न ममता रहे और न मोह रहे, न अभिमान रहे।
14. यह जो मन है वह भी प्रकृति की एक जटा है। मन का और औषधियाँ का दोनों का सम्बन्ध है।

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	80.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	60.00
*4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	100.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	60.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	80.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	40.00
10.	शंका-निवारण	35.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	125.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	125.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	125.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	45.00
19.	महाभारत के रहस्य	30.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	30.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	35.00
25.	चित्त की व वृत्तियों का निरोध	35.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	35.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	40.00
29.	याग-मन्जूषा	40.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मात-दर्शन	30.00
32.	याग और तपस्या	60.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	35.00
35.	याग-चयन	40.00
36.	दिव्य-रामकथा	120.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	35.00
38.	दिव्य-ज्ञान	40.00
*39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	90.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	40.00
41.	आत्म-उत्थान	40.00
42.	तप का महत्व	40.00
43.	अध्यात्मवाद	40.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	40.00
45.	वैदिक-प्रभा	35.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	40.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	35.00
50.	आत्मा का भोजन	40.00
51.	साधना	35.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	80.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	50.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	80.00
57.	माता मदालसा	60.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	80.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	80.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	80.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएँ	50.00
65.	प्रभु-दर्शन	50.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	80.00
*67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	80.00
*69.	ब्रह्म की ओर	50.00
*70.	ईश्वर मिलन	50.00
*71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	80.00
*72.	यौगिक प्रवचन माला भाग-16	80.00
*73.	नैतिक शिक्षा	50.00
*74.	यौगिक प्रवचन माला भाग-17	100.00
*75.	आत्मिक ज्ञान	60.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैः—

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला—बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, सुपुत्र श्री सुशील त्यागी डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री विवेक त्यागी, 16ए, आलोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड़, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122-2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110—मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097171
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23282088
14. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे. पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
15. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
मास्टर कवन्धि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज दिल्ली	101 रुपये
कुमारी अञ्जलि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सात्विक त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये

नम्र-निवेदन

समिति के बैंक के खाते में दान की राशि हस्तान्तरण करने से दानदाताओं का नाम, पता व उद्देश्य इत्यादि की जानकारी बैंक से पास नहीं हो पाती इसलिए सभी दानदाताओं से नम्र-निवेदन है कि राशि बैंक के खाते में हस्तान्तरण करने के साथ समिति की वेबसाइट पर या निम्न किसी भी एक पते पर दान राशि का अन्य विवरण सहित सूचना देने का कष्ट करें–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मंत्री
   ए-59, पँचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   के-3, लाजपत नगर-III, नई दिल्ली-110024 फोन : 011-41721294

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस अन्तरात्मा को जानने का प्रयास करें। हम आत्मवेता बन करके अपनी मानवीय धारा में ऊँचा बन जाएँ। यह न सूर्य है न चन्द्रमा है न तारामण्डल है, न अग्नि है, न शब्द है। भगवन्! प्रकाश के देने वाला आत्मा है। आत्मा के कारण ही मानव का शरीर क्रियाशील बना रहता है। तो इसीलिए प्रत्येक मानव को आत्मा को जानना चाहिए आत्मवेत्ता बनने के लिए, आत्मचेतना में ही रत्त रहना चाहिए। क्योंकि जो हमारे शरीरों में भास रहा है, प्रकाशक बना हुआ है, उस प्रकाश को जानने के, प्रकाश से प्रकाशित होना चाहिए। यह कैसा अद्‌भुत जगत है, इसके ऊपर विचारना है बहुत गम्भीरता से मनन करना है। क्योंकि मनन करने वाला यह ब्रह्माण्ड है, प्रभु की जो रचना है वह बड़ी अद्‌भुत है। इसीलिए प्रभु का गुणगान गाना हमारे लिए अनिवार्य है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 46 : अंक : 549
जून 2018

मूल्यः
दस रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2018-2020
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-06-2018
Published on 5th day of the same month